योग – साधना और मानव जीवन

Mkå vkHkk dekjh

मोतिहारी

पूर्वी चम्पारण। 845401

(बिहार)

सारांश

योग तत्व बहुत सूक्ष्म विज्ञान पर आधारित एक आध्यात्मिक विषय है जो मन एवं शरीर के बीच सांमजस्य स्थापित करने पर ध्यान देता है। योग से जुड़े ग्रंथो के अनुसार योग करने से व्यक्ति की चेतना ब्रह्मांड की चेतना से जुड़ जाती है जो मन एवं शरीर मानव एवं प्रकृति के बीच परिपूर्ण सामंजस्य का द्योतक है।

यह स्वस्थ जीवन – यापन की कला एवं विज्ञान है। योग का अर्थ है। जोड़ना सत्य से सत्य से जुड़ना आसान नही क्योंकि वह अत्यंत सुक्ष्म एवं दिव्य है महर्षि पतंजली नेः **'पतांजल योग सुत्र'** में योग के उपर्युक्त दोनों पक्षों योगसाध्ना एवं योग दर्शन का वर्णन किया है। योग शब्द **'युज'** धातु से उत्पन्न हुआ है।

योग विज्ञान की उत्पत्ति हजारों साल पहले हुई थी, धर्मों या आस्था के जन्म लेने से काफी पहले हुई थी। योग विद्या में शिव को पहले योगी या आदि योगी तथा पहले गुरू या आदि गुरू के रूप मे माना जाता है।

कूट शब्दः–

आस्था, चेतना, जीवन – यापन, योग– सूत्र, सामजस्य

योग हमारे शरीर ,मन, भावना एवं ऊर्जा के स्तर पर काम करता है इसकी वजह से योग को चार भागों मे बाँटा गया है–

कर्मयोग जहाँ हम अपने शरीर का उपयोग करते है।

भक्तियोग जहाँ हम अपनी भावनाओं का उपयोग करते है।

ज्ञान योग– जहाँ मन एवं बुद्धि का प्रयोग करते है।

क्रियायोग– जहाँ हम अपनी ऊर्जा का उपयोग करते है।

योग साधना की जिस पद्धति का उपयोग हो, वे इन श्रेणियों मे से किसी एक श्रेणी या अधिक श्रेणियों के तहत आती है ''योग पर सभी प्राचीन टीकाओं में इस बात पर जोर दिया गया है कि किसी गुरू के मार्गदर्शन में काम करना आवश्यक है।'' इस समय गुरू के सीधे मार्गदर्शन मे योग साधना की जाती थी इसका आध्यात्मिक महत्व भी था वैदिक काल में सूर्य को सबसे अधिक महत्व दिया गया शायद इसी प्रभाव के कारण आगे चलकर 'सुर्य नमस्कार' की प्रथा का विकास हुआ। प्राणायाम् दैनिक संस्कार का हिस्सा था पूर्व वैदिक काल में भी योग किया जाता था। महर्षि पतंजलि

ने अपने योग सूत्रों मे उस युग में विद्यमान योग प्रथाओं, इससे संबंधित ज्ञान का व्यवस्थित किया। पतंजलि के बाद अनेक ऋषियों एवं योगाचार्यों ने अपनी प्रथाओं एवं साहित्य के माध्यम से योग को परिभाषित किया एवं विकास में योगदान किया पूर्व वैदिक काल (2700 ई0 पू0) एवं इसके बाद पतंजलि काल तक योग के ऐतिहासिक साक्ष्य मिले है। इस अवधि के दौराने योग की प्रथाओं तथा संबंधित साहित्य के बारे में जानकारी मिलती है, उनके मुख्य स्त्रोत है –

वेदों – 4

उपनिषद्– 18

पुराण – 18

स्मृतियों, बौद्ध एवं जैन धर्म, पाणिनी के महाकाव्य मे उपलब्ध है। 500 ई० पू० से 800 ई० सन् तक के बीच का काल योग के विकास का काल माना जाता है।

इस अवधि के दौरान, योग सूत्र एवं भगवत गीता आदि पर व्यास की टीका भी अस्तित्व मे आयी। इस काल में प्राचीन भारत के दो महान धार्मिक उपदेशक भगवान महावीर एवं बुद्ध ने योग – साधना की शुरूआत की। जिसमें महावीर द्वारा पांच महान् व्रतों एवं बुद्ध द्वारा अष्ठ मग्गा या आठ पथ संकल्पना को शुरूआत को योग साधना में प्रकृति के रूप में माना जाता है भागवत गीता में भी ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्म योग को बताया गया है। इन योगो से आज भी अनुसरण करने से शांति मिलती है।

पतंजलि के योग सूत्र मे योग के विभिन्न घटक है और योग के आठ मार्गों का भी वर्णन है व्यास द्वारा योग सुत्र पर महत्वपूर्ण टीका भी लिखी गयी तथ मन को महत्व दिया गया । योग साधना के माध्यम से मन एवं शरीर दोनो को नियंत्रित किया जा सकता है। कुछ महान आचार्यों के उपरंश भी महत्वपूर्ण रहे जि समे आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, माधवाचार्य, आदियों इस काल मे सुदर्शन तुलसी दास, पुरंदर दास मीरा बाई के उपदेशों का भी योगदान रहा

हठयोग

परंपरा के नाथ योगी जैसे कि मत्स्येंद्र नाथ योगी गोरख नाथ, गोरांगी नाथ, स्वात्माराम सुरी, घेरांड श्रीनिवास भट्ट ऐसी कुछ महान हस्तियो है जिन्होंने इस अवधि के दौरान हठयोग की परंपरा की लोकप्रिय बनाया कई लोगों के लिए योग का अर्थ हठयोग एवं आसनों तक सीतित है योग सूत्रों में आसनों का वर्णन आता है हठ योग मे शरीर ऊर्जा के उच्च स्तर की प्रक्रिया को अपना सके जिससे श्वास, मन और अंतर तम की नियंत्रित किया जा सके।

योग किसी खास धर्म, आस्था पद्धिती या समुदाय के अनुसरस नही चलता है, इसे सर्वे अंतर तम की सेहत के लिए कला के रूप में देखा गया हैं कोई भी मनुष्य तल्लीनता से योग कर सकता है इसका धर्म, जाति संस्कुति समुदाय से मतलब नही है। भिन्न– भिन्न– परंपरागंत शैलियाँ योग के उद्भव

का मार्ग प्रशस्त करती है जैसे– ज्ञान योग, भक्ति योग कर्म योग है ध्यान योग पतंजलि योग, कुडलिनी योग, हठ योग मंत्र योग लय योग राज योग जैन योग बुद्ध योग आदि। हर शैली के अपने सिद्धांत एवं के परम लक्ष्य एवं उद्देश्यों की ओर ले जाती है।

योग जीवन भर स्वस्थ रहने का सबसे अच्छा सुरक्षित और आसान तरीका हैं यह शरीर के तीन मुख्य तत्वों शरीर मस्तिष्क और आत्मा के बीच संपर्क को नियमित करता है। यह स्वास्थय , ज्ञान और आन्तरिक शांति बनाए रखने मे मदद करता है अच्छे स्वास्थ्य प्रदान करने के द्वारा यह हमारी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करता है, ज्ञान के माध्यम से यह मानसिक आवश्यकताओं को और आंतिरक शान्ति के माध्यम से यह आत्मिक आवश्यकता को पूरा करता है योग प्रयोग किया गया दर्शन है, जो नियमित अभ्यास के माध्यम से स्व– अनुशासन और आत्म जागरूकता को विकसित करता है

योग सामान्य अर्थ होता है– जोड़ना आत्मा को परमात्मा से जोड़ने की प्रक्रिया आध्यात्मक भाषा में योग कहलाती है। इसे शुरू करने के लिऐ जिन को क्रिया– कलापो को अपनाना पड़ता है उन्हें साधन' कहते है। आत्मा को परमात्मा से मिला देने के लिए कुसंस्कारो से पीछा छुड़ाना पड़ता है मनुष्य अपने भौतिकतावादी स्तर से ऊंचे उठे और ईश्वरी चेतना के अनुरूप अपनी क्रिया, विचार एवं आस्था को ढाले तो ईश्वर प्राप्ति का जीवन लक्ष्य पूरा हो सकता है। लक्ष्य विहीन साधना को भटकाव कहा जा सकता है, शरीर में क्रिया मन में विचार और अंतरात्मा में भावना काम करती है । भावनाओं ही श्रद्धा, आस्था, निष्ठा मान्यता आदि कहा जाता है। 'आत्म– ज्ञान का अर्थ है अन्तरात्मा के गहन स्तर में यह अनुभूति एवं आस्था उत्पन्न करता है कि हम सत् चित के आनंद परमात्मा सत्ता के अभिन्न् अंग है आत्मबोध से लाभन्वित आत्मा अभाव या संकट ग्रस्त हो सकते है, पर अन्तः करण में उन्हें असीम आनंद और संतोष की अनुभूति होती है भगवान बुद्ध को जिस दिन आत्म ज्ञान हुआ, उसी दिन से दिव्य मानव बन गये जिस वट– वृक्ष कें निचे उन्हें आत्म बोध हुआ था उसकी ठहनियाँ काट– कर उनके अनुयायी अपने–2 क्षेत्रों में ले गये और वहाँ उसकी मुर्तिमान देवता के रूप में स्थापना की तात्पर्य है बुद्ध को समान्य राजकुमार से भगवान बना देने का श्रेय उस आन्तरिक जागरण या आत्म बोध को ही है। योग साधना में शरीर को स्वस्थ तथा आत्म नियंत्रित करने के एि अनेक साधनाओं का उल्लेख है।

हमारे मस्तिष्क

का 77, भाग काम में आता है , शेष 93% भाग सुप्त स्थिति में रहता है। उसे जागृत करना अपने भीतर की असंख्य अतीन्द्रिय क्षमताओं का विकास कर लेना है । अचेतन अविज्ञात है इसलिए उसकी जागृति अतीन्द्रिय शक्ती अदभुत अलौकिक लगती है परंतु यह प्रकृति व्यवस्था के पूर्णतया अनुकुल है।

महादार्शनिक

महर्षि पतंजलि के अनूसार योग की परिभाषा योगीश्चतवृति निरोध,, है। मनुष्य के अंदर जितनी वृत्रिया है उसका निरोध ही योग है। स्वाभाविक तौर पर मनुष्य के अंदर पचास वृतियाँ है और अस्वाभाविक तौर पर एक हजार वृत्रियाँ। योग शब्द का दूसरा अर्थ ळे एकीकरण यानि मिलन

'पाणिनी'

ने योग' शब्द की व्युत्पति 'युजिर योगे यूज समाधों तथा यूज संयमने' इन तीन धातुओं से मानी है प्रथम व्युत्पत्रित के अनूसार योग शब्द अनेक अर्थों मे प्रयोग किया गया हैख् जैसे– जोड़ना मिलाना आदि। इसी आधार पर जीवात्मा एवं परमात्मा का मिलन योग कहलाता है इसी संयोग की अवस्था को समाधि की संज्ञा दी जाती है जो जीवात्मा एवं परमात्मा की समता होती है। महर्षि पतंजलि ने योग शब्द को समाधि के अर्थ मे प्रयूत्र किया है। व्यास जी ने 'योगः समाधि, कहा है योग शब्द को वाचस्पत्रि ने भी यही कहा है संस्कृत व्याकरण मे योग शब्द को वर्णित किया गया है–

1. **युज्जते एतर, इति योगः–**

   इसके अनुसार

   योग शब्द का अर्थ चित की वह अवस्था है जब चिन्त की

2. **युज्यते अनेक आति योगः–**

   इसमें योग

   शब्द का अर्थ वह साधन है जिससे समस्त चितवृत्रियों में एकाग्रता लायी जाती है। इसी आधार पर योग के विभिन्न साधनों को जैसे हठयोग, मंत्रयोग, क्षतियोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग आदि नाम से पुकारा जाता है।

3. **युज्यते ड स्मिन्; इति योगः''**

   योग शब्द

   का अर्थ वह स्थान है जहाँ चित की वृत्रियों में एकाग्रता उत्पन्न की जाती है।

   योग सूत्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि ने योग के बारे में कहा कि चित की वृत्रियों का निरोध करना ही योग है। चित का तात्पर्य, अन्तः करण से है।

महर्षि पतंजलि के अनुसार :–

चित्त का तात्पर्य, अन्तः करण से है। बाह्मकरण ज्ञानेन्द्रिया जब विषयों का ग्रहण करती है, मन उस ज्ञान को आत्मा तक पहुॅचाता है। चित्त मे जो वृत्तियॉ उत्पन्न होती है, उन वृत्तियों को रोकना ही योग है। योग के अर्थ को महर्षि पतंजलि ने स्पष्ट किया है। पतंजलि ने योग को दो प्रकार बताया है –

(1) सम्प्रज्ञात योग – इस योग मे तमोगुण गौण रहता है।

(2) असम्प्रज्ञात योग – इस योग मे सत्त्वचित मे बाहर से तीनों गुणों का परिणाम होना बन्द हो जाता है तथा पुरूष शुद्व कैवल्य परमात्म स्वरूप में स्थित होता है।

महर्षि याज्ञक्ल्क्य के अनुसार :–

जीवात्मा व परमात्मा के संयोग की अवस्था का नाम ही योग है । कठोपनिषद् में योग के विषय में कहा गया है–

यदा पंचावतिश्ठनते ज्ञाननि मनसा सह। अप्रमत्तस्तरा भवति योगोहि प्रभावत्ययौ।

जब पाँचों ज्ञानेन्द्रियां मन के साथ स्थिर हो जाती है और मन–निश्चल बुद्धि के साथ मिलता है, उस अवस्था को परम–गति कहते हैं। इन्द्रियों की स्थिर धारणा ही योग है। जिसकी इन्द्रियां स्थिर हो जाती है उसमें शुभ संस्कारों की उत्पत्ति और अशुभ संस्कारों का नाश होने लगता है। यही अवस्था योग है।

मैत्राय उपनिषद् में कहा गयाः–

प्राण, मन व इन्द्रियों का एक हो जाना, एकाग्रावस्था की प्राप्त कर लेना, बाह्य विषयों से विमुख होकर इन्द्रियों का मन में और मन आत्मा में लग जाना, प्राण का निश्चल हो जाना योग है।

योग षडोपनिषद् में कहा गयाः–

आपन और प्राण की एकता कर लेना , स्वरज रूपी महाशक्ति कुण्डलिनी को स्वरेत रूपी आत्मतत्व के साथ संयुक्त करना, सूर्य अर्थात् पिंगला और चन्द्र अर्थात् इडा स्वर का संयोग करना तथा परमात्मा से जीवात्मा का मिलन योग है।

मद्भागवत् में भी कहा गया हैः–

आसक्ति त्यागकर समत्व भाव से कार्य तथा सिद्धि और असिद्धि में समता–बुद्धि से कार्य करना ही योग है। सुख–दुख, जय–पराजय, शीतोष्ण आदि द्वन्दों में एकरस रहना योग है। कर्मों में कुशलता ही योग है। कर्म इस कुशलता से किया जाए कि कर्म बंधन न कर सके। अनासक्त भाव से कर्म करना ही योग है।

पुराणों में भी योग के संबंध में अलग–अलग परिभाषाएँ है–

''ब्रह्म प्रकाश ज्ञान योग स्तत्रैक चित्तत चित्त वृत्तिनिरोधश्य जीव ब्रह्मात्मनी, पर :''

ब्रह्म में चित्त की एकाग्रता ही योग है। वृत्तिनिरोध से प्राप्त एकाग्रता ही योग है।

रांगेय राघव ने कहा है–

''शिव और शक्ति का मिलन योग है।''

लिंग पुराण के अनुसार –

लिंग पुराण में महर्षि व्यास ने योग का लक्ष्ण किया है कि सर्वार्थ विषय प्राप्तिरात्मनों योग उच्चते। अर्थात् आत्मा को समस्त विषयों की प्राप्ति होना योग कहा जाता है। समस्त विषयों को प्राप्त करने का सामर्थ योग की एक विभूति है। यह योग का लक्षण नही है। वृत्ति निरोध रहकर ही योग सिद्धि का फल प्राप्त हो सकता है।

अग्नि पुराण के अनुसार :–

अग्नि पुराण में भी कहा गया योग मन की एक विशिष्ट अवस्था है जब मन में आत्मा को स्वयं मन को प्रत्यक्ष करने की योग्यता आ जाती है, तब उसका ब्रह्म के साथ संयोग हो जाता है। संयोग का अर्थ है कि ब्रह्म की समरूपता उसमें आ जाती है। यह कमरूपता की स्थिति भी योग ही है। अग्नि पुराण के इस योग लक्षण में याज्ञवल्कय स्मृति के योग लक्षण से कोई भिन्नता नही है। मन का ब्रह्म के साथ संयोग वृत्तिनिरोध होने पर ही संभव है।

स्कन्द पुराण के अनुसार :–

स्कन्द पुराण भी उसी बात की पुष्टि करता है जिसे अग्नि–पुराण और याज्ञवल्क्य स्मृति कह रहे हैं। स्कन्द पुराण में लोक में जीवात्मा और परमात्मा की समता को समाधि कहा गया है तथा दूसरे लोक में परमात्मा और आत्मा की अभिन्नता को परम योग कहा गया है। इसका अर्थ है कि समाधि ही योग है। वृत्तिनिरोध की अवस्था में ही जीवात्मा और परमात्मा की यह समता और दोनों का अविभाग हो सकता है।

हठ योग प्रदीपिका के अनुसारः–

योग के विषय में हठयोग की मान्यता का विशेष महत्व है। वहाँ कहा गया है कि '' सलिबे सैन्धव यद्धत साम्य भजति योगत।''

जिस प्रकार नमक जल में मिलकर जल की समानता को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार जब मन वृत्ति शून्य होकर आत्मा के साथ ऐक्य को प्रापत कर लेता है तो मन की उस अवस्था का नाम समाधि है। आत्मा और मन की एकता भी समाधि का फल है।

महर्षि पतंजलि ने योग की समस्त विद्याओं को आठ अंगों में श्रेणीबद्ध कर दिया है। यह आठ अंग 1.यम 2.नियम 3.आसन, 4.प्राणायाम 5. प्रत्याहार 6.धारणा 7.ध्यान 8.समाधि

योग के इन आठ अंगों को आचरण में लाने से चिन्तवृतियों का शुद्धिकरण होता है, आत्मस्वरूप का ज्ञान होता है।

1. यम (पांच ''परिहार''):– अहिंता, झूठ नही बोलना, लोभ, विषयासक्ति, दूसरे के संपत्ति का स्वामित्व
2. नियम (पाँच, ''धार्मिक क्रिया''):– पवित्रता, संतुष्टि, तपस्या, अध्ययन और ईश्वर को आत्म समर्पण।
3. आसन, मूलार्थक अर्थ ''बैठने का आसन'' और पतंजलि सूत्र में ध्यान।
4. प्राणायाम (''सांस की स्थगित रखना'')
   प्राण सांस, (''अमूर्त'') बाहरी वस्तुओं से भावना अंगों के प्रत्याहार।
5. प्रत्यहार (''एकाग्रता''): ध्यान की वस्तु की प्रकृत्ति का गहन चिंतन।
6. समाधि (''विमुक्ति'') ध्यान के वस्तु को चैतन्य के साथ विलय करना। इसके दो प्रकार है– सविकल्प और अविकल्प। अविकल्प समाधि में संसार में वापस आने का कोई मार्ग या व्यवस्था नही होती। यह योग पद्धिति की चरण अवस्था है।

   हठयोग पतंजति के राज योग से काफी अलग जो सत्कर्म पर केन्द्रित है। इसके अनुसार भौतिक शरीर की शुद्धि ही मन की प्राण की और विशिष्ट उर्जा की शुद्धि लाती है। हठयोग,

योग, की एक विशेष प्रणाली है जिसे 15वीं सदी के भारत में हठयोग प्रदीपिका के संकलक, योगी स्वत्मरमा द्वारा वर्णित किया गया था।

योग केवल हमारे मस्तिष्क को मजबूती देता है बल्कि आत्मा को भी शुद्ध करता है।

योगसनों के नियमित अभ्यास से स्वास्थ्य में उन्नति होती है। सूर्यनमस्कार सबसे आसान और महत्वपूर्ण आसन माना जा रहा है, जिसमें 12 विभिन्न मुद्राओं के अनेकानेक लाभ होते हैं। शरीर का प्रत्येक बाह् एवं आंतरिक अंग–प्रस्यंग सदप्रभावित,मेरूदंड सुदृढ, कमर लचंकदार, पाचन तंत्र एवं नाड़ी संस्थान संशक्त, निम्न रक्तचात से मुक्ति।

इसी तरह अनेकों आसन है जिन्हे करने से शारीरिक विकार दूर होते हैं, मनुष्य स्वस्थ्य जीवन का आनंद ले रहे हैं।

उपसंहार

योग एक आध्यत्मिक प्रक्रिया है। जिसमें शरीर मन और आत्मा को एक साथ लाने का काम होता है। यह शब्द–प्रक्रिया और धारणा हिन्दु धर्म, जैन धर्म और बौद्ध धर्म में ध्यान प्रक्रिया से संबंधित है। प्राचीन काल में योग विद्या सन्यासियों या मोक्षमार्ग के साधकों के लिए समझी जाती थी तथा योगाभ्यास के लिए घर का त्याग कर एकांत वन में वास करना पड़ता था। लोगों में धारणा बन गयी कि योग सामाजिक व्यक्तियों के लिए नहीं है, जिससे योग विद्या लुप्त होने लगी। परंतु पिछले कुछ वर्षों से समाज में बढ़ते तनाव, चिंता, प्रतिस्पर्धा से ग्रस्त लोगों को इस गोपनीय योग से अनेकों लाभ हुए और योग विद्या एक बार पुनः समाज में लोकप्रिय होने लगी। भारत ही नही पूरे विश्व में योग सामाजिक और आध्यत्मिक महत्व रखता है। अनेकों शोध के कारण योग में जटिल रोगी का इलाज संभव हो पाया है, जन–मानस इसका लाभ उठा रहे है।

योग जीवन जीने की कला है, साधना विज्ञान है। मानव जीवन में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इसको साधना व सिद्धांतों में ज्ञान का महत्व दिया गया है। इसके द्वारा आध्यत्मिक और भौतिक विकास संभव है। परंतु आज योग एक सुव्यवस्थित व वैज्ञानिक जीवन शैली के रूप में भी प्रमाणित हो चुका है।

संदर्भ–ग्रन्थ

योग सुक्त	1/2
योग सुक्त	1/3
कठोपनिषद्	2/3/10–11
षखोपनिषद्	1/68–69
उपनिषद्	6/25
मद् भागवत गीता	2/48
लिंगम पुराण	2/50

अग्नि पुराण 183 / 1–2

स्कंद पुराण 3 / 12

हठयोगी प्र0 4 / 5

ऋग्वेद साहित्य

नासदीय सुक्त

अग्नि पुराण (379) 25